Volume XIII, ISSN: 2321-3914
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19
UGC Approval Number 63014

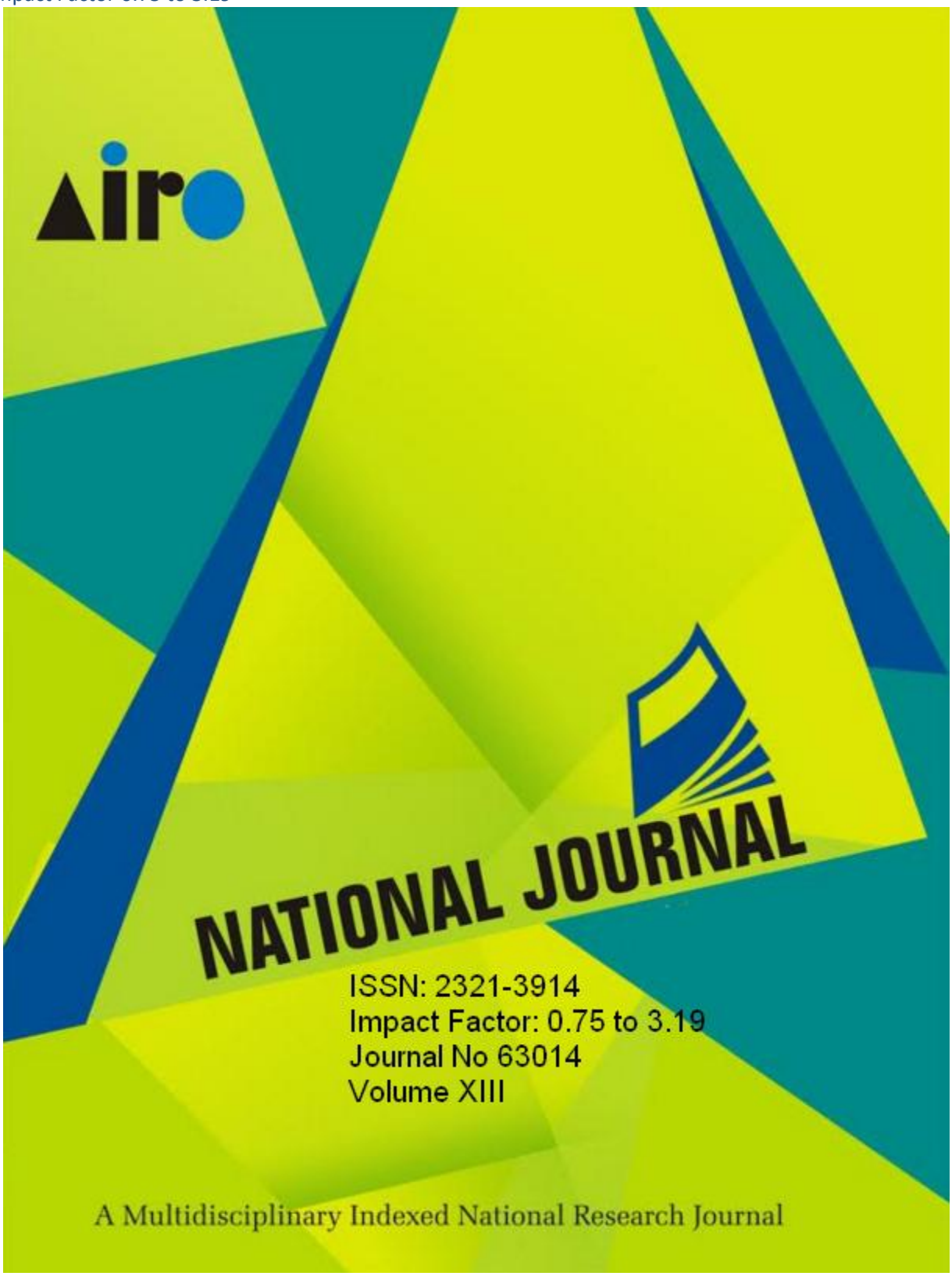

Airo National Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2321-3914
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63014

भारतेन्दु युगीन गद्य-साहित्य

राघवेन्द्र प्रताप सिंह

(शोधार्थी)

हिंदी एवं भाषा विज्ञान विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश (भारत)

Declaration of Author: I hereby declare that the content of this research paper has been truly made by me including the title of the research paper/research article, and no serial sequence of any sentence has been copied through internet or any other source except references or some unavoidable essential or technical terms. In case of finding any patent or copy right content of any source or other author in my paper/article, I shall always be responsible for further clarification or any legal issues. For sole right content of different author or different source, which was unintentionally or intentionally used in this research paper shall immediately be removed from this journal and I shall be accountable for any further legal issues, and there will be no responsibility of Journal in any matter. If anyone has some issue related to the content of this research paper's copied or plagiarism content he/she may contact on my above mentioned email ID.

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "आधुनिक काल में गद्य का अविर्भाव सबसे प्रधान साहित्यिक घटना।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, प्रथम संस्करण का वक्तव्य) गद्य के अविर्भाव के साथ गद्य की साहित्यिक विद्याओं का अविर्भाव भी अनिवार्य हुआ। अधिकांश साहित्यिक गद्य विद्या भारतेन्दु युग में ही जन्मी। इस युग में जन्म लेकर विकसित होने वाली तीन मुख्य साहित्यिक विधाएँ हैंμनाटक, निबंध और उपन्यास।

भारतेन्दु से पूर्व नाटक के नाम पर मिलेन वाली रचनाएँ एक तो बहुत कम हैं, दूसरे सच्चे अर्थो में वे नाटक भी नहीं हैं। इस युग से पहले नाट्क रचना के अनुकूल स्थितियाँ भी नहीं थी। भारतेन्दु ने 'कालचक्र' में एक दृष्टि से ठीक ही नोट कियाμहिन्दी में प्रथम नाटक-नहुष नाटक (1859) तथा द्वितीय नाटक शकुन्तला (1863) तथा तृतीय-विद्यासुन्दर (1871)।" इस तीन नाटकों में से दो नाटक अनुवाद हैं। राजा लक्ष्मणसिंह कृत 'शकुन्तला' कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तलानाटकम्' का अनुवाद है और 'विद्यासुन्दर' स्वयं भारतेदु के द्वारा बंगला से अनूदित है। भारतेंदु ने एक अंग्रेजी से, एक बंगाली से और पांच संस्कृत से नाटको के अनुवाद में 'हरिश्चन्द्र' और मौलिक नाटकों में 'वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति', 'श्रीचन्द्रावली', 'भारतदुर्दशा' और 'अंधेर नगरी' को विशेष ख्याति मिली। उन्होंने अपने कुछ नाटकों में यदि अपनी प्रेम और भक्ति भावनाओं को अभिव्यक्त किया तो अन्य अधिकांश नाटकों में अपने समकालीन समाज, धर्म, राजनीति, प्रशासन, न्याय व्यवस्था और अर्थव्यवस्था की समस्याओं को उजागर किया है। इन समस्याओं को उजागर करने में उनका सबसे बड़ा अस्त्र है हास्य और व्यंग। 'अंधेर नगरी' के अन्त में महन्त द्वारा कही गई इन पंक्तियों से तीखा कटाक्ष अंग्रेजी शासन पर और क्या हो सकता हैμ

जहां न धर्म न बुद्धि नहिं, न सुजान समाज।

ते ऐसहि नसे, जैसे चौपटराज,

भारतेन्दु ने अपने नाटकों के लिए भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्यशैलियों के उपयुक्त तत्व लेकर एक नई नाट्यशैली का निर्माण किया था। उने नाटकों के केन्द्र में नाट्यवस्तु, नाट्यशिल्प और जीवन दृष्टि संबंध प्रयोगशीलता और प्रगतिशीलता दोनो विद्यमा हैं। उन्होंने आपने नाटक रंगमंच के लिए लिखे थे। वे स्वयं रंगमंच पर सक्रिय थे। इसलिए उनके 'अंधेर नगरी' जैसे नाटक आज भी सफलतापूर्वक मंचित होते हैं।

भारतेंदु मण्डल के रचनाकारें में से डॉ. जगमोन सिंह को छोड़कर बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, देवकीनन्दन तिवारी, अम्बिका दत्त व्यास इत्यादि सभी ने नाटक लिखे। भारतेंदु युग के नाटककारों में से भारतेंदु के अतिरिक्त तीन नाटककार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैंµलाला श्रीनिवासदास, प्रतापनारायण मिश्र और राधाचरण गोस्वामी। लाला श्रीनिवासदास ने 'प्रह्लाद चरित्र', 'तपता संवरण', 'रणधीर-प्रेममोहिनी' और 'संयोगिता स्वयंवर'- इन चार नाटकों की रचना की। इनमें से 'रणधीर-प्रेममोहिनी' उनका सर्वोत्तम अपने समय में सर्वाधिक लोकप्रिय होने वाला नाटक है। अंग्रेजी नाट्यशैली में लिखी गयी यह दु:खन्त प्रेमकथा है, जिस पर रीतिकालीन श्रृंगारलीलाओं का स्पष्ट प्रभाव है। आज इस कृति का महत्व मात्र ऐतिहासिक है। प्रतापनारायण मिश्र ने 'हमीर हठ', 'भारत दुर्दशा', 'कलिकौतुक रूपकम', 'गो-संकट', 'संगीत शकुन्तल', 'कलिप्रभाव नाटक', 'जुआरी-खुआरी' इत्यादि अनेक नाटकों की रचना की। उनके नाटक युगीन चिन्ताओं को व्यक्त करने के साथ-साथ शिल्पगत प्रयोगशीलता की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है। राधाचरण गोवस्वामी ने 'सती चन्द्रावली', और 'सुदमा' जैसे ऐतिहासिक पौराणिक नाटक लिखे, जो सामान्य कोटि के हैं, किंतु नाटककार के रूप में उनका महत्व उनके प्रसहनों के कारण है। 'बूढे मुहँ मुँहा से', 'तन-मन-धन गुसाईजी के अर्पण', 'भंग-तरंग', 'लोग देखें तमाशा' आदि प्रसहनों से उन्होंने अपने समकालीन जीवन के नकारात्म्क पक्षों की जैसी धज्जियाँ उड़ाई है और जैसी दूरदर्शी प्रगतिशील दृष्टि का परिचय दिया है, वह भारतेंदु युग में ही नहीं, बाल में भी कम ही नाटककारों में देखनेको मिलती है।

भारतेंदु युग में नाट्य-रचना और नाट्य-प्रदर्शन का एक आंदोलन ही उठ खड़ा हुआ था। एक साथ जितने नाटककार इस युग में नाट्य रचना में संलग्न थे, उतने पूरे हिन्दी साहित्य के किसी एक काल में नहीं था। इसका कारण यही है कि साहित्य के माध्यम से समाज को बदलने का जैसा उत्साह इस काल के नाटकों में था वैसा हिंदी साहित्य में फिर कभी दिखाई नहीं दिया। ये नाटककार समझते थे कि जनसाधारण तक अपनी बात को प्रभावशाली ढंग से पहुंचाने का सबसे सशक्त माध्यम नाटक है। यही कारण है कि जिस समग्रता के साथ इस काल के नाटकों में समकालीन जीवन प्रतिबिम्बित हुआ है

वैसी समग्रता के साथ और किसी काल के नाटकों में नहीं हुआ है।

भारतेन्दु युग में जिस दूसरी गद्य-विद्या का विकास विशेष रूप से हुआ, वह निबंध है। निबंध से हमरा तात्पर्य उस लध्वाकार अकथात्मक गद्य रचना से है, जो अपने संरचना में स्व्छन्द होती है और जिसमें लेखक की वैयक्तिकता, उसका व्यक्तित्व निबंध अभिव्यक्ति पाता है। इस दृष्टि से लेख निबंध से अलग है। इस युग के गद्य लेखकों ने समकालीन जीवन और इतिहास के अनेक पक्षों पर प्रभूत मात्र में लेख लिखे हैं, जिनमें से अधिकांश तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं की फाइलों में दबे पड़े हैं। इन लेखो का महत्व असंदिग्ध है, क्योंकि इनके माध्यम से हम न केवल उस काल के लेखकों की सोच से परिचिवत होते हैं अपितु युग की प्रमाणिक जानकारी भी हमें मिलती है। लेकिन साहित्यक दृष्टि से इन लेखों की अपेक्षा निबंध का महत्व अधिक है।

यद्यपि भारतेन्दु युग के अनेक लेखकों ने निबंध लिखे हैं, किंतु निबन्धकार रूप में अपना वैशिष्ट्य स्थापित करने वाले चार ही लेखक हैं। भारतेंदु हिरश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्टर, प्रतापनारायण मिश्र और बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमधन'। भारतेंदु ने निबंध कम लिखे हैं, लेख अधिक। उनके विभिन्न विषयों पर लिखे ये लेखों में उनकी भावनाओं और उनकी व्यंग्य-प्रवृत्ति ने अभिव्यक्ति अवश्य पाई है, किंतु इतनी क्षीणता के साथ कि लेख, निबंध नहीं बन सके हैं। अगर भारतेंदु को निबन्धकार के रूप में हम याद करते हैं तो 'अंग्रेजों से हिंदुस्तानियों का जी क्यों नहीं मिलता', 'स्वर्ग से विचारसभा का अधिवशेन', 'स्त्री-सेवा-पद्धति', 'अथ मदिरास्तवराज', 'कंकर स्तोत्र', ईश्वार बड़ा विलक्षण है, 'पांचवें (चूसा) पैगम्बर' जैसी रचनाओं के कारण। इन रचनाओं में भारतेंदु का स्वच्छन्द प्रगतिशील व्यक्तित्व, व्यंग्य-विनोद विचारों के मुक्त प्रवाह, चमत्कारपूर्ण किन्तु अनौपचारिक अभिव्यक्ति शैली के माध्यम से छलका पडता है। भारतेंदु की अपेक्षा 'बालकृष्ण भट्ट' के निबंध संख्या से भी अधिक हैं और परिपक्वता भी उनमें कहीं अधिक है। वे विद्वान थे, अंग्रेजी साहित्य के अच्छे ज्ञाता थे, गम्भीर विचारक थे और परिहासप्रिय भी थे। वे एक ओर शिक्षित समुदाय का ध्यान हिंदी की ओर आकृष्ट करना चाहते थे और 'विदग्ध साहित्य' को प्रोत्साहन देना चाहते थे। लेख पढ़ कुन्द की कली समान दांत न खिल उठे तो लेख ही क्या। इसलिए उन्होंने चाहे राजनैथ्तक, सामाजिक, साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक आदि गंभीर विषयों पर लिखा हो अथवा 'चढ़ती उमर', 'मुग्ध माधुरी', 'पौगण्ड व कैशोर', 'रोटी तो किसी भांति कमा खाये मुछन्दर', 'बातचीत', 'आंख', 'खटका', 'जवान', 'नहीं', 'जी', 'द', 'नाक', 'ढोल के भीतर पोल', 'नये तरह के जनून' आदि हल्के फूल्के विषयों पर उनके निबन्धों में विचार, भावना, परिहास और व्यंग्य सब एक साथ विद्यमान रहते हैं। किसी निबंध में आद्यन्त गंभीर विचारात्मकता मिलेगी, न भावुक्ता और न ही

हास्य-व्यंग्य। उनके निबंधों में विभिन्न भाषाओं की काव्य-पंक्तियों के उद्धारण भी विद्यमान हैं और उक्ति चमत्कार भी। वे हिंदी के गिनेचुने श्रेष्ठ निबंधकारों में से एक है।

प्रतापनारायण मिश्र भट्ट के समकालीन थे, भारतेंदु हरिश्चन्द्र के अनन्य भक्त थे, राजनीतिक में सक्रिय थे सामाजिक धार्मिक बन्धनों की चिन्ता नहीं करते थे मस्तमौला जीव थे। उनकी जीवन-कथा उपन्यास जैसी रोचक है। उनका यह जीवन उनके निबंधों में खूब प्रतिबिम्बित हुआ है। एक ओर उन्होंने ऐसे निबंध लिखे हैं। जिनकी वैचारिकता केंद्र में है और दूसरी ओर उन्होंने ऐसे निबंध लिखे जिनमें उनका मस्तमौला व्यक्तित्व केंद्र में है। पहले प्रकार के निबंधों में उन्होंने औपचारिकता का काफी हद तक निर्वाह किया है, दूसरे प्रकार के निबंधों में पूर्णत: अनौपचिारिक हैं। इन निबंधों में वे अपने पाठकों से बड़े ही अनौचारिक और आत्मीय ढंग से बात करते हैं। वैसे, 'बुढ़ापा', 'भौ', 'धोका', 'दांत', 'ट', 'द', 'खुशामद', 'आप', 'तिल', 'बात' जैसे विषयों पर अनौपपरिक हुए बिना लिखा भी नहीं जा सकता। मिश्रजी के निबंधों में आयासहीन प्रवाह सजीवता, आत्मीयता, बांकपन, उक्ति-चमत्कार, भावनों और विचारों का चुलबुलापन, व्यंग्य-विनोद आदिऐसे छलकते रहते हैं जैसे सेब में से लाली छलकती है। इनसे मिलती-चुलती विशेषताएँ बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' के लघ्वाकार निबंधों में विद्यमान हैं, किंतु कम मात्रा में। जिन्हें निबंध कहा जा सकता है, उनकी ऐसी रचनाएँ कम हैं, जैसे, 'बनारस का बुढ़ावा मंगल, 'समय', दिल्ली दरबार में मित्र मण्डली के यार' 'हमारी मसहारी' इत्यादि। प्रेमघन जी बाणभट्ट के गद्य को अपना आदर्श मानकर चले। इसलिए भारतेंदु युग के गद्यकारों में इनकी शैली सबसे अलग है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनके संबंध में यह ठीक ही लिखा है कि 'वे गद्य रचना को एक कला के रूप में ग्रहण करने वाले-कलम की कारीगरी को समझने वाले लेखक थे और कभी-कभी ऐसे पेचीले मजमून बांधते थे कि पाठक एक-एक डेढ़-डेढ़ कालम के लंबे वाक्य में उलझा रह जाता था। अनुप्रास और पदविन्यास की ओर भी उनका ध्यान रहता था। किसी बात को साधारण ढंग से कह जाने को ही वे लिखना नहीं कहते थे।'

इन चार निबंधकारों के अतिरिक्त इस काल के अन्य लेखकों ने भी अनेक अच्छे निबंधों की रचना की है। पाठक और लेखक के बीच जैसा अनौपचारिक और आत्मीय संबंध भारतेदु युग में स्थापित हुआ वैसे अन्य किसी युग में नहीं शायद इसलिए इस युग में निबंध साहित्य सम्पन्न हुआ।

उपन्यास अन्य गद्य विद्याओं की तुलना में सबसे अधिक लोकप्रिय विद्या है। हिन्दी साहित्य में इस विद्या का आरंभ इस दृष्टि से और भी अधिक महतवपूर्ण है कि इसकी लोकप्रियता इतनी बढ़ी कि हिंदी न जानने वालों ने भी उपन्यास पढ़ने की ललक से हिंदी सीखी। भारतेंदु युग में आधुनिक हिंदी उपन्यास जन्मा भी और विकास भी हुआ। उसे

प्रेरणा मिली बंगला उपन्यासों से। 1864 ई. मं बंकिमचन्द्र के उपन्यास 'दुर्गेशनन्दिनी' का हिंदी में अनुवाद हुआ। उसके बाद न केवल बंकिमचन्द्र के अपितु रमेशचन्द्र दत्त, हाराणाचन्द्र रक्षित, चण्डीचरण सेन, चारुचन्द्र आदि के उपन्यासों के भी अनुवाद प्रकाशित हुए। इन्हीं से तथा अंग्रेजी उपन्यासों से प्रेरित होकर हिंदी में उपन्यास लिखे जाने लगे।

हिंदी के पहले उपन्यास के रूप में जिन चार रचनाओं का नाम लिया जाता है वे हैं µ गौरीदत्त कृत 'देवरानी-जिठानी' (1870 ई.) मुंशी ईश्वरीप्रसाद मुदर्रिस 'रियाजी' (1872 ई.), श्रद्धाराम फिल्लौरी µकृत 'भाग्यवती' (1877 ई.) और लाला श्रीनिवासदास µकृत 'परीक्षा गुरू' (1882 ई.)। इनमें से पहली तीन रचनाओं को कोरी उपदेशात्मकता और यथार्थ जीवन का आभस न देने वाली कथाएँ होने के कारण उपन्यास को कोरी उपदेशात्मकता और यथार्थ का आभास न देने वाली कथाएँ होने के कारण उपन्यास नहीं माना गया। अब प्राय: सभी 'परीक्षा-गुरु' को हिन्दी का पहला उपन्यास स्वीकार करते हैं। क्योंकि उपदेशात्मक होने पर भी इसकी कथा यथार्थाभासी है और इसमें नये ढंग से चरित्रचित्रण का प्रयास भी किया गया है।

इस पहले उपन्यास के बाद भारतेंदु युग में बहुत बड़ी संख्या में उपन्यास लिखे गये। इन उपन्यासों को लक्ष्य की दृष्टि से दो वर्गों में विभाजित किय जा सकता है। एक वर्ग उन उपन्यासों का है, जो अपना विषय चाहे समाज से लें, चाहे इतिहास पुराण से अथवा शुद्ध काल्पनिक कथ गढ़ें, लेकिन मनुष्य जीवन की विभिन्न समस्याओं और भावनाओं को उपस्थित करने के साथ-साथ शिक्षा भी देते हैं। ऐसे उपन्यास किशोरी लाल गोस्वामी, राधाकृष्णदास, राधाचरण गोस्वमी, ठा. जगमोहन सिंह, हरिऔध, गोकुलनाथ शर्मा, बालकृष्ण भट्ट मेहता लज्जा राम शर्मा आदि ने लिखे। इनमें से किशोरी लाला गोस्वामी का वैशिष्ट्य इस बात में है कि उन्होंने संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक उपन्यास लिखे हैं और सभी तरह के उपन्यास लिखे हैं। सभी में श्रृंगार का रीतिकालीन पद्धति से खुला चित्रण किया है और स्वाभाविकता एवं प्रमाणिकता की बिल्कुल चिंता नहीं की है। राधाचरण गोस्वामी के उपन्यासों का वैशिष्ट्य हिंदू समाज की विसंगतियों को प्रस्तुत करने में है। उनके तथा राधाकृष्णदास एवं मेहता लज्जा राम शर्मा के उपन्यास हिंदू गौव की भावना से ओतप्रोत हैं।

दूसरा वर्ग उन उपन्यासों का है जिनका लक्ष्य शुद्ध मनोरंजन है। मनोरंजन उपन्यासों में एक श्रेणी तिलिस्मी-अय्यारी उपन्यासों की है। इस श्रेणी के उपन्यासों में सर्वोत्तम उपन्यास देवकीनन्दन खत्री ने लिखे। उनके 'चंद्रकान्ता संतति' (1894-1909) को पढ़ने के लिए उस समय न जाने कितने लोगों ने हिंदी सीखी। उनके ये उपन्यास आज भी रुचिपूर्वक पढ़े जाते हैं। उनके 'कुसुम कुमारी', 'नरेन्द्र मोहिनी', 'विरेन्द्र वीर', 'अनूठी बेगम', 'गुप्त गोदना' और 'भूतनाथ' ने भी कम लोकप्रियता प्राप्त नहीं की। इस प्रकार के उपन्यास भारतेंदु युग के अन्य कई

उपन्यासकारों ने भ लिखे, लेकिन उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली मनोरंजक उपन्यासों में दूसरी श्रेणी जासूसी उपन्यासों की है। जासूसी उपन्यास लिखने वालों में सबसे पहला नाम गोपालराम गहमरी का है। उनके द्वारा प्रकाशित 'जासूस' और 'गुप्त कथा' पत्रों में उनके जासूसी साहित्य उपन्यास प्रकाशित हुए। 1896 ई. और 1946 ई. के बीच उनके लगभग 200 उपन्यास प्रकाशित हुए। इनमें में से कितने मौलिक है और कितने अंग्रेजी एवं बंगला उपन्यासों की छाया, कहना मुश्किल है। उनके जैसे श्रेष्ठ जासूसी उपन्यास लिखने वाला हिंदी में कोई दूसरा उपन्यासकार नहीं है। भारतेंदु युग के अन्य अनेक लेखकों ने भी जासूसी उपन्यस लिखे हैं।

भारतेंदु युग में प्रचुर संख्या में उपन्यासों की रचना एक ओर उनकी लोकप्रियता की द्योतक है तो दूसरी ओर मध्यवर्ग के उभार की भी द्योतक है। उपन्यास हर दृष्टि से मध्यवर्ग संबंद्ध गद्य विधा है।

उपर्युक्त तीन गद्य विद्याओं के अतिरिक्त अन्य गद्य विद्याओं की दृष्टि से भारतेंदु युग की कोई विशेष देन नहीं है। कहानी का जन्म इस युग में न होकर द्विवेदी युग में हुआ। पत्रिकाओं में पुस्तकों की परिचयात्मक सूचना को पुस्तक-समीक्षा का प्रारंभिक रूप कहा जा सकता है। भारतेंदु के निबंध 'नाटक' (1883 ई.) से सैद्धांतिक और लाला श्रीनिवासदास के नाटक 'संयोगिता स्वयंवर' की बालकृष्ण भट्ट और 'प्रेमघन' द्वारा लिखित विस्तृत और तीक्ष्ण आलोचना से व्यावहारिक आलोचना का सूत्रपात अवश्य हो गया, किंतु उसका विकास आगे चलकर ही हुआ।

संदर्भ ग्रंथ

- हिंदी साहित्य का इतिहास (प्रथम संस्करण) (पृ. 6) आचार्य राम चंद्र शुक्ल
- भारतेंदु समग्र (पृ. 776)
- भारतेंदु समग्र (पृ. 777)
- भारतेंदु समग्र (पृ. 778)
- भारतेंदु समग्र (पृ. 779)
- भारतेंदु समग्र (पृ. 780)
- भारतेंदु समग्र (पृ. 556)
- हिंदी साहित्य का इतिहास (पृ. 430) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
- भारतेंदु समग्र (पृ. 44)